International Journal of Research
Special Issue for UGC Approved Journal-Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals
e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 04 Issue 15
November 2017

वैश्वीकरण के युग में स्तरीकरण के भारतीय प्रतिमान

डॉ0 विद्याधर पाण्डेय
एसोसिएट प्रोफेसर
दीनदयाल राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय
सैदाबाद, इलाहाबाद

भारतीय समाज में स्तरीकरण के परम्परागत आधार के रूप में जाति को सभी समाजशास्त्रियों ने कम या अधिक रूप में स्वीकार किया है। साथ ही वर्ग के उद्भव व विकास की प्रक्रिया के कारण उपनिवेशीय भारतीय समाज के समय से जाति व वर्ग में परस्पर अर्न्तक्रिया हुई है। स्वतन्त्रता के पश्चात इस अर्न्तक्रिया में और अधिक तेजी आई। इसी सन्दर्भ में 1991 के आर्थिक सुधारों के बाद एक क्रान्तिकारी परिवर्तन की लहर आई। इस शोध पत्र में उदारीकरण व वैश्वीकरण की प्रक्रिया को परिवर्तन के कारण के रूप में लिया गया है। इस शोध पत्र में वृहत स्तर पर वैश्वीकरण व उदारीकरण के जाति व वर्ग की अर्न्तक्रिया पर प्रभाव का आलोचनात्मक विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है। प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य इस तथ्य पर प्रकाश डालना है कि किस प्रकार वैश्वीकरण की प्रक्रिया द्वारा स्तरीकरण के भारतीय प्रतिमान अर्थात् जाति व वर्ग परिवर्तित होती हुई भूमिका में सामने आ रहे हैं।

स्तरीकरण का ऐतिहासिक परिदृश्य :

जी0एस0 घुरिए, लुई डुमॉ एवं एम0एन0 श्रीनिवास द्वारा किए गए अध्ययनों से जाति को स्तरीकरण के एक परम्परागत आधार के रूप में मान्यता मिली। एम0एन0 श्रीनिवास एवं अन्द्रे बेटे ने जाति में होने वाले परिवर्तनों और परिवर्तित होती हुई जाति की भूमिका पर प्रकाश डाला। उपनिवेशीय भारत में जब नए वर्ग का उद्भव और विकास प्रारम्भ हुआ तो धीरे–धीरे स्तरीकरण के इन दो आधारों के बीच में अर्न्तक्रिया होनी शुरू हुई। जाति और वर्ग की इस परस्पर क्रिया को समझने के लिए

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 04 Issue 15
November 2017

और इसके भारतीय समाज पर प्रभाव को समझने के लिए इस अर्न्तक्रिया को ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में समझना आवश्यक है। जहाँ जाति प्रदत्त प्रस्थिति का आधार है वहीं वर्ग अर्जित प्रस्थिति का आधार है। जाति ग्रामीण भारत की कृषक व्यवस्था से जुड़ी हुई है जबकि वर्ग बाजार व्यवस्था से जुड़ी हुई है। भारतीय अर्थव्यवस्था एक कृषि आधारित व्यवस्था से वर्तमान की बाजार व्यवस्था तक रूपान्तरित हुई है। ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में समझने के लिए इसे दो अवस्थाओं में बांटा जा सकता है। पहली अवस्था उपनिवेशीय कालीन भारतीय समाज की है। दूसरी अवस्था स्वतन्त्र भारतीय समाज को दर्शाती है। दूसरी अवस्था पुनः दो उप–अवस्थाओं का मिश्रण है। पहली उप–अवस्था उदारीकरण व वैश्वीकरण से पूर्व की है और दूसरी उप–अवस्था उदारीकरण व वैश्वीकरण के बाद की है।

उपनिवेशीय भारत में स्तरीकरण का आधार भूमि के स्वामित्व और प्रदत्त प्रस्थिति से जुड़ा हुआ था। परम्परागत सामाजिक संस्थाओं के रूप में संयुक्त परिवार, जजमानी अवस्था एवं जाति ने सम्पूर्ण गांव को एक समुदाय के रूप में बांध रखा था।

उपनिवेशीय भारत में धीरे–धीरे परम्परागत सामाजिक व्यवस्था में उपनिवेशीय अधोसंरचना ने सेंध लगानी प्रारम्भ की। एक उपनिवेशीय नीति के अन्तर्गत ब्रिटिश प्रशासकों ने न केवल नयी प्रशासनिक व्यवस्था का निर्माण प्रारम्भ किया अपितु समुदाय के आधारभूत स्तम्भों जैसे सामाजिक व सांस्कृतिक आयाम को चोट पहुँचाने के साथ ही कृषक अर्थव्यवस्था को तोड़ने का कार्य प्रारम्भ किया। इसी उपनिवेशीय उत्पाद के रूप में न तो पश्चिमीकरण के नए तत्व जैसे शिक्षा और जागरूकता परम्परागत समाज में पहुँच पाए और न ही पुरानी व्यवस्था की आधारशिला बची। स्पष्ट है कि न तो नयी व्यवस्था के तत्व भारतीय समाज में समाहित हुए और न ही इसकी परम्परागत संरचना का परिरक्षण हुआ। फलतः एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 04 Issue 15
November 2017

के रूप में परिणति हुई जिसमें न तो नवीनता के पल्लव फूटे और न ही परम्परागत जड़ों की रक्षा हो पाई।

स्वतन्त्रता के पश्चात्, प्रारम्भिक वर्षों में इस स्तरीकरण की व्यवस्था को सुधारने के लिए आधुनिकीकरण और भूमि सुधार जैसे कार्यक्रमों को अपनाया गया। हरित क्रान्ति, भूमि–सुधार, कृषि का नवीनीकरण इत्यादि सामाजिक कार्यक्रमों के प्रारम्भिक दशकों के परिणाम स्वरूप जाति और वर्ग के बीच होने वाली अर्न्तक्रिया सामाजिक कार्यक्रमों गतिकी के एक नए आयाम के रूप में सामने आयी। उच्च जातियों का सामाजिक संस्थाओं तक जो सीधा सम्बन्ध था, वह टूटने लगा। साथ ही साथ निम्न जातियों विशेषकर **मध्यवर्ती जातियों** की सामाजिक संसाधनों तक पहुँच बढ़नी शुरू हुई। परिणामस्वरूप उच्च जातियों में निम्न वर्ग और निम्न व मध्यवर्ती जातियों में मध्य व उच्च वर्ग में जाने की गतिशीलता बढ़ी।

समकालीन भारत में स्तरीकरण के प्रतिमान :

स्वतन्त्रता के पश्चात्, आर्थिक सुधारों के पहले तक यह स्थिति स्पष्ट होने लगी थी कि जाति की परम्परागत संरचना अपने गैर–परम्परागत स्वरूप में नयी पहचान बनाने लगी है। जाति में वर्ग के सम्मिलित हो जाने के बाद भी जाति की असमानता टूटने की जगह और अधिक मजबूत होकर सामने आयी। किन्तु वर्ष 1991 के आर्थिक सुधारों के बाद जब भारतीय अर्थव्यवस्था पहली बार वैश्विक अर्थव्यवस्था से जुड़ी तब उदारीकरण व वैश्वीकरण की प्रक्रिया ने सामाजिक स्तरीकरण को भी नए आयाम दिए। आर्थिक व्यापार के बंधन जब खुलने लगे तब मध्य वर्ग के आधार व गठन में आमूल चूल परिवर्तन हुए।

जहाँ 1990 के दशक तक जाति एक मजबूत आधार पर टिकी हुइ थी वहीं अब भारतीय समाज में आर्थिक शक्तियों ने विशेषतः बाजार की शक्ति ने जिस उपभोक्तावाद और गतिशीलता को बढ़ावा दिया उसमें आशा की गई थी कि

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 04 Issue 15
November 2017

सामाजिक असमानताएँ विखण्डित होगी और गतिशीलता संरचनात्मक बंधनों को धीरे–धीरे स्वतः मुक्त करती जायेगी। यद्यपि ऐसा नहीं हुआ। भारतीय समाज में इस परिदृश्य में एक ऐसे संरचनात्मक आधार का विकास होना प्रारम्भ हुआ जो धीरे–धीरे सम्पूर्ण समाज को अपने प्रभाव में लेता गया।

उदारीकरण एवं वैश्वीकरण की प्रक्रिया से गुजरते हुए इस समाज को हम देखते हैं तो पाते है कि जातियाँ में वर्ग और वर्ग में जातियाँ न केवल मिश्रित हुई हैं अपितु इसके सामाजिक–आर्थिक व राजनीतिक आायाम उस आशा के ठीक विपरीत हैं जो इस विचार पर टिकी है कि बाजार अर्थव्यवस्था स्वतः धीरे–धीरे दलित और शोषित व निर्बल श्रेणी का सशक्तीकरण करती जाएगी।

भारतीय समाज के कृषक अर्थव्यवस्था से बाजार अर्थव्यवस्था के इस रूपान्तरण की प्रक्रिया में जाति और वर्ग से जुड़ी हुई पहचान इतनी विखण्डित और बिखरी हुई है कि उसे प्रभुत्वशील विचारधारा के द्वारा राजीतिक क्षेत्र में व आर्थिक क्षेत्र में हित साध्य सामाजिक श्रेणी की भांति प्रयुक्त किया जा रहा है।

वैश्वीकरण की प्रक्रिया के सामाजिक–आर्थिक व राजनीतिक आयाम :

भारत में वैश्वीकरण व उदारीकरण की प्रक्रिया के प्रारम्भिक चरण में यह माना जा रहा था कि इससे सामाजिक गतिशीलता बढ़ेगी और अन्ततः एक नयी सामाजिक व्यवस्था के संगठन की सहज प्रक्रिया चलेगी। किन्तु इसके ठीक विपरीत बढ़ती हुई शिक्षा व रोजगार के अवसरों में वृद्धि होने के साथ–साथ बाजार की शक्तियाँ अपने प्रबल रूप में आती गईं। समकालीन समाज में अकेले एशिया में एक विलियन लोग गरीबी की रेखा से ऊपर आए हैं (एशियन डेवलपमेंट बैंक 2010) मैंकिनसे क्वार्टरली रिपोर्ट 2007 में स्पष्ट रूप से बताया गया कि 2025 तक भारत में निजी खपत रू0 70 ट्रिलियन तक पहुँच जाएगी इसका सीधा प्रभाव भारतीय समाज में बढ़ते हुए उपभोक्तावाद के रूप में देखा जा सकता है

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 04 Issue 15
November 2017

वर्तमान में जाति और वर्ग के परम्परागत स्तरीकरण से आगे बढ़कर स्वयं बाज़ार समाज का न केवल विखण्डन कर रहा है अपितु धनी और निर्धन व सम्पन्न और विपन्न के बीच दूरी को और अधिक बढ़ा रहा है। लोक सर्वेक्षण में यह तथ्य सामने आया कि किस प्रकार उच्च वर्ग के साथ–साथ मध्य वर्ग भी अपनी हाउसिंग सोसाइटी में अपने पड़ोसियों को जाति व वर्ग के आधार पर दोयम दर्जा देता है।

बड़ी–बड़ी बहुमंजिला इमारतों में निवास करने वाला यह धनी वर्ग शारीरिक श्रम करने वाले अपने ही कर्मचारियों द्वारा लिफ्ट के प्रयोग पर छुपा हुआ प्रतिबन्ध लगा रहा है। बड़ी–बड़ी हाउसिंग सोसाइटी में क्रय क्षमता होने के बाद भी क्रेता की जाति व धर्म एक महत्वपूर्ण कारण की भूमिका निभा रहे हैं। यही नहीं यदि वर्तमान में बाजारों का स्वरूप देखें तो वे जनता की जगह न बनकर ऐसी निजी सम्पत्ति के रूप में सामने आए हैं जिनमें निगरानी के नए हथकंडो का प्रयोग करके केवल धनी व सबल वर्ग को ही प्रवेश दिया जाता है। इस पूरी प्रक्रिया में जनता के लिए जगह न केवल कम होनी शुरू हो गई है अपितु जनता के अधिकारों को भी शापिंग माल व बहुराष्ट्रीय कम्पनी की दुकानों की निगरानी के द्वारा क्रय शक्ति के पररखा और यथोचित सिद्ध किया जा रहा है। बाजार द्वारा निर्देशित इस विचारधारा में मध्य वर्ग भी उसी धनी वर्ग के समान व्यवहार कर रहा है जो आधारभूत मूल्य से कटे हुए हैं।

दूसरी ओर राजनीतिक परिदृश्य में बार–बार जाति व वर्ग की श्रेणियों को इस प्रकार प्रयुक्त किया जा रहा है कि उसका राजनीतिक मूल्य सत्ता को प्राप्त करने के लिए अधिक से अधिक किया जा रहा है। बाजार के ठीक विपरीत, राजनीतिक परिदृश्य में मूल मुद्दा दमित, शोषित और विपन्न जनता के अधिकारों की लड़ाई के चारों ओर केन्द्रित हो जाता है। अन्ततः वैश्वीकरण के आर्थिक आयाम संकुचित और संकीर्ण स्वरूप में भारतीय समाज में परिलक्षित हो रहा है। जबकि वैश्वीकरण का

राजनीतिक आयाम अभी भी परम्परागत सामाजिक संरचना की जड़ों से जुड़े होने के कारण प्रजातान्त्रिक व्यवस्था को अर्थपूर्ण ढंग से लागू करने में बाधा बन रहा है।

सदर्भ सूची :

- राजेश शुक्ला (2010) : 'हाउ इंडिया अर्नस, स्पेन्ड्स एंड सेर्वस; अनमास्किंग द रियल इंडिया, सह प्रकाशित–सेज पब्लिकेशन्स प्राइवेट इंडिया लिमिटेड, न्यू डेलही एंड छब्।म्त्.ब्डब्, परिशिला भवन, 11 प्च स्टेट, न्यू डेलही।
- अन्द्रे बेटे (2001) : 'द इंडियन मिडिल क्लास'; द हिन्दू, ऑनलाइन एडीशन, फरवरी 5, 2001, ीजजचरूध्ध्ूण्जीमीपदकनण्बवउध् 2001ध्02ध्05ध्जवतपमेध्05052523णीजउण
- द मेकिन्से क्वार्टरली रिपोर्ट 2007
- ई0 श्रीधरन (2014) : क्लास वोटिंग इन द 2014 लोक सभा इलेक्शन्स, द ग्रोइंग साइज एन्ड इम्पॉरटेन्स ऑफ द मिडिल क्लास, इकोनोमिक एंड पोलिटकल वीकली, अंक गस्प छव 39एश्मच 27ए 72.76 पेज संख्या
- देमरेथ एन जे0 ण्ए सुरेन्द्र एस जोधका, लोरेन आर देमरेथ (2006) : इंटेरोगेटिंग कास्ट एंड रिलीजन इन इंडियाज इमजिंग मिडिल क्लास, इकोनोमिक एंड पोलिटिकल वीकली,
- अन्द्रे बेटे (1980) : द इंडियन विलेज : पास्ट एंड प्रेसेन्ट' इन ई0जे0 हॉब्सबॉम (मकपजमक), पीसेन्ट इन हिस्ट्री : एसेज इन ऑनर ऑफ डेनियल वार्नर, ऑक्सफोर्ड यूनीवर्सिटी प्रेस, कलकत्ता।
- पी0 ब्रास (1990) : द पॉलिटिक्स ऑफ इण्डिया सि0स0 इंडिपेन्डेन्स, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, कैम्ब्रिज।